चित्रः महाराष्ट्र की वर्ली पेंटिंग

भारत की लोक चित्रकलाएं

भारतीय चित्रकला में दो परंपराएं रही हैं—'शास्त्रीय' परंपरा और 'देसी' (वर्नाक्युलर) या लोकचित्र परंपरा। शास्त्रीय चित्रकला और पेंटिंग्स का उदय मुख्य रूप से ग्रामीण और जनजातीय समाजों की परंपराओं और मूल्य-मान्यताओं से हुआ है। शास्त्रीय कलाकृतियों के रूप में हमारे पास बहुत सारे भित्ति चित्र और लघुचित्र मौजूद हैं। शास्त्रीय कलाओं के क्षेत्र में हमारे पास दस्तकारों और उनके शिल्पसंघों वाले प्रख्यात गुरुकुल और केंद्र भी रहे हैं। दूसरी तरफ लोकचित्रों के मामले में चित्र बनाने की पूरी प्रक्रिया एक रस्मी अनुष्ठान का रूप ले लेती है। यह विधा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के पास स्वाभाविक रूप से चलती चली जाती है। इस तरह की चित्रकारी दीवारों और फर्श को सजाने के लिए बहुत इस्तेमाल होती है।

यदि शास्त्रीय चित्र या मंदिरों में पाई जाने वाली कला राजा-महाराजाओं और उनके राजपाट का ब्यौरा देती हैं, उनके जीवन, उनके विश्वासों और उनके देवी-देवताओं की जानकारी देती हैं तो वहीं दूसरी तरफ लोकचित्रों में आम लोगों की ज़िंदगी, उनकी मान्यताओं और किस्से-कहानियों, उनके देवी-देवताओं को चित्रित किया जाता है। भारत में ब्राह्मणवादी दर्शन और रूढ़िवादिता को सहारा देने वाली शास्त्रीय संस्कृति के समानांतर लोक संस्कृति अपने आसपास के सभी तत्वों और उदारवादी विचारों को स्वीकार करते हुए आगे बढ़ी है। लोक संस्कृति की मुख्य चिंता बरसात, फसल, प्रकृति आदि के साथ जद्दोजेहद पर केंद्रित रहती है। लोक संस्कृति और कलाओं में विश्वास रखने वाले इस सोच के साथ अपना जीवन जीते हैं कि उन्हें ज़िंदगी को जुए की तरह देखने की बजाय उसका मज़ा लेते हुए आगे बढ़ना है। जीवन के प्रति उनका गहरा अनुराग उनकी सजीव और रंग-बिरंगी पेंटिंगों में भी साफ दिखाई देता है।

हमारे देश में तीज-त्योहार और मेलों के मौके पर प्रायः पूरा गांव एक जगह इकट्ठा होकर जश्न मनाता है। उनके चित्रों में भी पूरे समुदाय की हिस्सेदारी को महत्वपूर्ण माना जाता है। ज़्यादातर परंपरागत भारतीय

चित्रों को एक के बजाय कई-कई कलाकार मिलकर बनाते हैं। सामूहिक रूप से विरासत में पाई अपनी नज़र और निपुणता को वह सामूहिक रूप से ही एक कलाकृति में भी उतार देते हैं।

इस सांस्कृतिक धारा में गुजरात के रतवा समुदाय की *पिथौरो पेंटिंग*, महाराष्ट्र की *वर्ली पेंटिंग*, बिहार में मिथिला की *मधुबनी पेंटिंग*, राजस्थान की *फड़ चित्रकला*, आंध्र प्रदेश की *चेरियल पेंटिंग* और पश्चिम बंगाल की *पट पेंटिंग* हमारी प्रमुख चित्र परंपराएं रही हैं।

रतवा समुदाय गुजरात के पंचमहल और बड़ौदा ज़िलों का एक महत्वपूर्ण समुदाय है। *रतवा लोक चित्रकारी* परंपरा में लोग अपने घरों की दीवारों पर सृष्टि की रचना और सुरक्षा एवं कल्याण के देवता पिथौरों के मिथकों को अंकित करते हैं। इन चित्रों को कई कलाकार एक साथ मिलकर तैयार करते हैं और उनमें सिर्फ़ पुरुष चित्रकार ही शामिल होते हैं। जिस समय कलाकार चित्र बना रहे होते हैं उसी समय दो या तीन गायक लगातार सृष्टि, पिथौरो और इंद्री राजा के मिथकों का बखान करते रहते हैं। चित्र पूरा होने के बाद स्वीकृति की एक और रस्म निभाई जाती है जिसमें पिथौरो की आत्मा से लैस बड़वा उस पेंटिंग की बारीकी से जांच करता है। उसकी अनुमति मिलने के बाद चित्र पर एक बकरी की बलि चढ़ाई जाती है।

चित्र: बिहार की मधुबनी पेंटिंग

वर्ली जनजातीय समुदाय महाराष्ट्र के थाणे ज़िले में सहयाद्री पर्वत श्रृंखला के जंगल में रहता है। वर्ली नाम "वराल" शब्द से आया है। वराल का मतलब होता है ज़मीन का टुकड़ा या खेत। वर्ली समुदाय के लिए खेती-बाड़ी ही आजीविका का मुख्य स्रोत है। इस समुदाय के लोग अपनी पेंटिंगों को बड़ा पवित्र मानते हैं। उनके चित्रों के बिना उनका विवाह समारोह भी संपन्न नहीं हो सकता। उनके चित्र बुनियादी तौर पर विवाह का उत्सव होते हैं। उनमें समुदाय के जीवन तथा गतिविधियों को एक खास अंदाज़ में चित्रित किया जाता है। वर्ली पेंटिंग अन्य लोक चित्र परंपराओं से काफी भिन्न है। अन्य परंपराओं में चमकदार रंग ज़्यादा इस्तेमाल किए जाते हैं जबकि वर्ली पेंटिंग्स मिट्टी की भूरी या गाढ़ी लाल सतह पर सफेद रंग से बनाई जाती हैं।

मधुबनी पेंटिंग बिहार के मिथिला इलाके में मधुबनी के आस-पास स्थित गांवों में विकसित हुई एक परंपरागत चित्र शैली है। परंपरागत रूप से महिलाएं ये पेंटिंग्स बनाती हैं और उनमें मुख्य रूप से धार्मिक पात्रों को चित्रित किया जाता है। ये चित्र घर के खास कमरों (पूजा कक्ष, अनुष्ठान का स्थान, दुल्हन का कमरा) की दीवारों पर, गांव की मुख्य दीवारों पर किसी उत्सव या रस्म के समय बनाए जाते हैं। चित्र शुरू करने से पहले औरतें देवी-देवताओं के सामने प्रार्थना करती हैं। इन चित्रों के प्रतीक प्रकृति और पुराणों से लिए जाते हैं। इन चित्रों में हिंदू देवी-देवताओं और रामायण के दृश्यों का चित्रण सबसे अधिक लोकप्रिय है।

राजस्थान के भीलवाड़ा ज़िले में शाहपुरा स्थित मंदिर के जोशी लोग *फड़ नामक पेंटिंग* बनाते हैं। यह पेंटिंग बहुत लंबी होती है और उसे एक बांस या छड़ी पर लपेट कर रखा जाता है। इन चित्रों में स्थानीय जननायकों के जीवन का वर्णन किया जाता है। इसके बाद इन 'फड़ों' को गांव-गांव घूमने वाले भोपाओं को सौंप दिया जाता है। वह इन चित्रों को गांव-गांव ले जाते हैं और गा-गाकर इन चित्रों के बारे में लोगों को बताते हैं।

वारंगल, आंध्र प्रदेश में भी लंबी लिपटी हुई पेंटिंग बनाने की एक समृद्ध परंपरा रही है। इन्हें *चेरियल पेंटिंग*

कहा जाता है। इन चित्रों में एक खास समुदाय के जन्म का विवरण दिया जाता है। समुदाय के देवी-देवताओं, दैत्यों और नायकों की कहानियां भी इन चित्रों का प्रिय विषय होती हैं। चेरियल गांव में वेंकटरमैया का परिवार ही संभवतः एकमात्र ऐसा परिवार है जो अभी भी इस विधा को आगे बढ़ा रहा है। एक ज़माने में यहां के लोग इसी तरह की लिपटी हुई पेंटिंग्स में लंबी-लंबी कहानियां चित्रित किया करते थे। पहले कथावाचकों के बीच भी इन चित्रों की भारी मांग थी। ये कथावाचक नक्काशियों द्वारा तैयार की गई इन पेंटिंगों को नाचते-गाते हुए गांव-गांव में दिखाया करते थे।

पट चित्र पश्चिम बंगाल का एक परंपरागत कला रूप है। धार्मिक और सामाजिक प्रतीक एवं कल्पनाएं इस विधा का मुख्य विषय हैं। पट बंगला का एक शब्द है जो संस्कृत के पट्टा अर्थात् कपड़ा से जन्मा है। इस कला का जन्म कहां हुआ इस बारे में ठीक-ठीक कहना मुश्किल है। यहां तक कि इस समुदाय के जन्म के बारे में प्रचलित कहानियों से भी इस समुदाय के उदय का सही पता नहीं चल पाता। यहां के पटवा मुसलमान होते हुए भी हिंदू नाम रखते हैं और वह रामायण, महाभारत और पुराणों की कहानियां इन चित्रों में दर्शाते हैं। उनका जातिनाम या उपनाम चित्रकार होता है जिससे उनके व्यवसाय का पता चलता है। इन चित्रों को पट कहा जाता है और एक-एक पट दर्शकों के सामने दिखाते हुए गीतों के माध्यम से कहानियां सुनाई जाती हैं।

तेज़ शहरीकरण के दबाव में चित्रकारी की इन लोक परंपराओं को अब पहले जैसे सम्मान की नज़र से नहीं देखा जाता। इन परंपरागत चित्रकलाओं से जुड़े लोग भी मजबूरन अब मज़दूरी या अन्य व्यवसायों में जाने लगे जिससे उनकी कला खत्म होने की कगार पर पहुंच गई है। आज उनकी कला को बचाने और उन्हें प्रोत्साहित करने की सबसे बड़ी ज़रूरत है।

साभारः आई.एस.डी.

चित्रः राजस्थान की फड़ पेंटिंग